P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-II * Issue-XII*August-2015

अभिराजराजेन्द्र मिश्र के कथा साहित्य का युगीन समाकलन

अशोक कंवर शेखावत
व्याख्याता,
संस्कृत विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
झालावाड़, राजस्थान

सारांश

अभिराज राजेन्द्र मिश्र अर्वाचीन संस्कृत साहित्य के लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार हैं। साहित्य की समस्त विधाओं में सिद्धहस्त अभिराजराजेन्द्र मिश्र का कथा साहित्य समसामयिक समयानुकूलता की कसौटी पर पूर्णरुपेण खरा उतरता है। समकालीन समाज की ऐसी कोई समस्या अथवा विषय नहीं है जो उनकी कथावस्तु का विषय न बना हो और समाधान को प्राप्त न हुआ हो। लिंग भेद, कन्या भ्रूण हत्या, वेश्यावृत्ति, विधवावस्था, वर्ण–व्यवस्था, भ्रष्टाचार, धर्मान्धता, वन्ध्यावस्था, यौन–दुराचार, बाल–विवाह, पुनर्विवाह, जाति–व्यवस्था, पलायनवाद, अन्तर्जातीय–विवाह, प्रेमविवाह, नैतिक–अवमूल्यन, सामाजिक–दोहरा चरित्र, लावारिस–शिशु, पर्यावरण–चेतना समस्त विषय उनकी कथा मुक्तिकाओं में समाधान प्राप्त कर जनमानस के कण्ठहार बने हैं।

मुख्य शब्द : 'क्रान्तदर्शिनः, ऋतुकालेन, शतपर्विका, जिजीविषा, चंचा, पुनर्नवा, आत्मविश्लेषणम्, काष्ठभाण्डम्''

प्रस्तावना

'कवयः क्रान्तदर्शिनः अर्थात् कवि, देश व काल की सीमाओं से परे जाकर सत्य का साक्षात्कार करता है, वह सीमाओं में आबद्ध होकर नहीं रह सकता। अन्तः सत्ता के साक्षात्कार की सहज प्रक्रिया में वह जो महसूस करता है, वह सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक उपादेयता को धारण करता है। यही कारण है कि त्रिकालदर्शी कवि के काव्य की उपादेयता, उसकी प्रासंगिकता सदैव बनी रहती है। किसी भी काव्य की उपादेयता अथवा प्रासंगिकता ही उसके चिरंजीवी होने का आधार है, जो समय के साथ अप्रासंगिक हो जाता है उसे छोड़ना ही होता है तथा जो प्रासंगिक है उसे धारण करना ही होता है। अधुनातन समयानुकुल आचरण ही आधुनिकता कहलाता है।

अभिराजराजेन्द्र मिश्र का कथा साहित्य प्रासंगिकता अथवा उपादेयता की कसौटी पर पूर्णतः खरा उतरता है। उनकी कथाएं कालखण्ड की सीमाओं को चीरते हुए प्रत्यक्ष अनुभूति का विषय बन जाती है। अनादिकाल से प्रवाहित संस्कृत साहित्य की काव्य परम्परा के मौलिक स्वरुप को अक्षुण्ण बनाए रखते हुए उन्होंने वर्तमानकालीन समस्याओं को कथाओं की विषय वस्तु बनाया है। नवीन समय, नवीन दृष्टिकोण, नवीन समस्याएं, नवीन समाधान उनके साहित्य को समसामयिक दृष्टि से अमूल्यता प्रदान करता है। ''वे 'पुराणमित्येव न साधुं सर्वम्' के समर्थक होकर उद्घोष करते हैं कि गया वह जमाना जब स्त्रियाँ असूर्यम्पश्या होती थी। आज नारी अन्तरिक्ष पर आरुढ हो रही है। अतः प्राचीन प्रतिमानों से नहीं नापा जा सकता।''

अभिराजराजेन्द्र मिश्र की कथाओं की विषयवस्तु, उनके पात्र, संवाद एवं वातावरण नवीन समयानुकूल नवीनता लिए हुए हैं, परन्तु उनका उद्देश्य समकालीन समस्याओं को समाज के समक्ष रखना, समाज को उस विषय में सोचने के लिए विवश करना एवं समकालीन परिप्रेक्ष्य में उनका उचित समाधान करना है। अप्रासंगिक हो चुकी पारम्परिक शृंखलाओं को तोड़ते हुए भी अभिराज राजेन्द्र मिश्र स्वप्न में भी सीमाओं का अतिक्रमण नहीं करते हैं।

उनकी कथाओं की सर्वोत्तम विलक्षण क्षमता उनकी प्रासंगिकता, सामयिकता अथवा उपादेयसता ही है। समकालीन समाज की ऐसी कोई समस्या अथवा विषय नहीं है, जिसे उन्होंने अपनी कथाओं का विषय न बनाया हो और उसका आदर्श समाधान प्रस्तुत न किया हो। सामयिक दृष्टि से उचित परन्तु पुरातन जीवन मूल्यों की विरासत के समन्वय के साथ। अद्भुत है उनकी कथाओं में विद्यमान समाधान।

कविवर ने अधुनातन समाज में यत्र–तत्र सर्वत्र व्याकुलता प्रदान करने वाली सामाजिक विसंगतियों पर तीक्ष्ण प्रहार करते हुए उन्हें सुसंगतियों में परिवर्तित करने का मांगलिक प्रयास किया है। कविवर ने समाज में विद्यमान

लिंगभेद, कन्या भ्रूण हत्या, वेश्यावृत्ति, विधवा दुर्दशा, वन्ध्यावस्था, यौन–दुराचार, बालविवाह, पुनर्विवाह, जाति व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, भ्रष्टाचार, धर्मान्धता, पलायनवाद, अर्न्तजातीय व अन्तर्देशीय विवाह, प्रेम विवाह, नैतिक अवमूल्यन, सामाजिक दोहरा चरित्र, लावारिश शिशु, पर्यावरण, आदि समस्त विषयों को उन्होंने अपनी कथाओं की विषयवस्तु में पिरोया है।

तथाकथित नारी सशक्तीकरण के अनेक दावों के बावजूद समाज में नारी की स्थिति दूसरे स्थान पर है। आज भी उसे भोग्या दृष्टि से देखा जाता है, वस्तु की तरह उपभोग में लिया जाता है, शिक्षा में लड़कों को प्राथमिकता दी जाती है, विवाह में उनकी इच्छा को महत्ता नहीं दी जाती है। 'जिजीविषा' की 'तपती' शिक्षित है, आजीविका चाहती है। परन्तु समाज उसके यौवन को प्रतिफल के रुप में चाहता है। तपती जैसे उदाहरण समाज में हजारों की संख्या में मिल सकते हैं। तपती की पीड़ा आज की आजीविका चाहने वाली अधिकांश स्त्री समाज की पीड़ा है–

''न कुत्रापि गुण शिक्षाशीलमूल्यम्। सर्वत्रैव यौवनमूल्यम्''
यौवनादृते किमन्यदासीत् तदर्हत्वम्।''[1]

परन्तु विवेक के रुप में विवेकशील वर के द्वारा तपती का वरण इस सामाजिक मान्यता को परिपुष्ट करता है कि यदि किसी के द्वारा शारीरिक शोषणसे पीड़ित स्त्री अवरेण्य नहीं है।

हमें स्त्री के प्रति उस दोहरे अन्यायपूर्ण आचरण से बाहर आना होगा जिसमें जो उसके साथ शारीरिक अत्याचार करता है, वही उसे अपवित्र, उपभुक्त जैसी संज्ञा देकर पुनः मानसिक एवं भावनात्मक अत्याचार करता है। हम अपने पुरातन आदर्श मानकों में वरेण्य स्त्री को–

''अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहैरनाविद्धं रत्नं मधुं नवमनास्वादितरसं अखण्डं पुण्यानां फलभिवव तद्रूपमनघं न जावे भोक्तारं कमिह समुपस्थास्थति विधिः।''[2]

के रुप में वर्णित करते हैं। हमें इन पारम्परिक विचारसरणि को तोड़कर शास्त्रीय तर्कसंगत वैचारिक परम्परा का वरण करना होगा जिसमें कविवर कहते हैं–

''स्वयं विप्रतिपन्ना वा यदि वा विप्रवासिता।
बलात्कारोपभुक्ता वा चोरहस्तगतापि वा।।
न त्याज्या दूषिता नारी नास्यात्यागोविधीयते।
पुष्पमुपासीत ऋतुकालेन शुध्यति।''[3]

इस परिभाषा अथवा समाधान से कविवर ने उन समस्त नारियों को सम्मान के पद पर प्रतिष्ठापित किया है, जो बलात्कार पीड़ित हैं, विधवा है, परित्यक्ता है अथवा अपहृत है। नैतिकता के मापदण्ड स्त्री–पुरुष के लिए समान होने चाहिए। इसी दिशा की ओर कविवर ने प्रवृत्त किया है।

समसामयिक परिप्रेक्ष्य में लैगिंक संतुलन की बिगड़ती स्थिति सम्पूर्ण समाज एवं प्रशासन के लिए चिन्ता का विषय बना हुआ है। लैंगिक संवेदनशीलता जाग्रत करने के लिए सरकार हर स्तर पर कार्य कर रही है। एक जिम्मेदार साहित्यकार के रुप में कवि ने जनचेतना जाग्रत करने की दिशा में अपनी कथाओं को सशक्त शस्त्र की तरह माध्यम बनाया है। कविवर की 'शतपर्विका' कहानी कन्या सन्तति की उपेक्षा, उसकी पीड़ा को उठाते हुए इस संदेश को वहां तक ले जाती है कि पुत्रियां–पुत्रों की तरह की सेवाभावी एवं पारिवारिक संस्कारों को आगे ले जाने वाली होती है। पुत्र प्राप्ति की कामना में सात पुत्रियों का पिता बना रामलाल अपनी बेटियों को अपने दुर्भाग्य का कारण मानता है, उनका तिरस्कार करता है, परन्तु पुत्री की सेवा सुश्रुषा से उसका हृदय परिवर्तन होता है। यह रामलाल का हृदय परिवर्तन पूरे समाज का हृदय परिवर्तन है। वह पश्चाताप करता है–

''मया नृशंसेन पुत्र लोभवशात् स्वकन्यकाः भृशं समुपेक्षिताः ..... यदि नाम मत्कन्यकाः प्रारम्भादेव मद्वात्सल्यलालिता अभविष्यत् अवश्यमेवासां सद्गुण विकाशोऽभविष्यत्।''[4]

वस्तुतः तो कन्याएं दूर्वा घास की तरह घर की शोभा होती है। अपोषित असिंचित, अरक्षित होते हुए भी आत्मबल से ही पुनर्नवता को प्राप्त कर लेती है। रामलाल कहता है– ''शतपर्विका इव में तनूजाः। यथा हरितवर्णा शतपर्विका गृहद्वारसुषमां संवर्धयति, शयने श्लास्तरणसाम्यं दधती सौख्यं जनयति, स्वनवनवाङकुरैः पशुपक्षिणः प्रीणयन्ति, आत्मारामतयाऽपोषिताऽपि अनभिषिक्ताऽपि अरक्षिताऽपि स्वादृष्टबलेनैव पुनर्नवतामुपैति नित्यहरिता च संलक्ष्यते।''[5]

यह दृष्टिकोण ही पुत्र व पुत्री के प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार को दूर कर सही दिशा देगा और अन्ततोगत्वा समाज में कन्यासन्तति का भी उतना ही अभिनन्दन होगा जितना पुत्र सन्तति का होता है।

स्त्री को भोग्या अथवा उपभोग की वस्तु समझने के कारण समाज में जो विकृतियां आई उनमें से एक है वेश्यावृत्ति। समाज में स्त्री की उपयोगिता एवं महत्ता उसके सौन्दर्य एव शारीरिक सुगढ़ता से मानी जाती है। समाज की दृष्टि सर्वप्रथम उसके शारीरिक अस्तित्व पर होती है। भोग लोलुप मनुष्य समाज में एकाधिक स्त्रियों के साथ समागम चाहता है। इस विकृत मानसिकता का ही परिणाम है यह देह व्यापार अथवा वेश्यावृत्ति। जब किसी स्त्री को कुछ चाहिए होता है तब उसके बदले में समाज की दृष्टि उसके रुप एवं सौन्दर्य पर होती है। विवशता में स्वयं अथवा दूसरों के द्वारा बाध्य किये जाने पर किसी भी प्रकार से प्राचीन काल से ही वेश्यावृत्ति समाज में अपना अस्तित्व बनाए हुए है। कवि कहते हैं ''भारते यथा दिव्योद्भवा भाषा, दिव्योद्भवं नाट्यं, दिव्योद्भवो नृपतिश्श्रूयते सर्वथा तथैवं वेश्यावृत्तिरपि दिव्योद्भवा।''[6]

समकालीन समाज में भी बदले हुए रुप में वेश्यावृत्ति ही चल रही है। इस तथ्य को इंगित करते हुए कविवर कहते हैं– ''तत्कृते समाजेऽन्ये सदुपाया इदानीं प्रचलिताः। धन कुबेरै र्मुम्बइ कलिकातादि महानगरेषु पंचतारका बहुभूमिका विश्रामालयाः स्थापिता यत्र..... अभिजात कुलोत्पन्नाः कन्यकाः कलाप्रदर्शनत्याजेन नृत्यन्ते। पुराचीनैव मदिराऽभिनवेषु गोलकेषु वर्तत इतिदिक्।''[7]

परन्तु कविवर समाज के इस उपेक्षित, वंचित, शोषित एवं मुख्यधारा से विलग अंश को समाज की मुख्यधारा से जोड़कर इस समस्या का आदर्श समाधान प्रस्तुत करते हैं। कविवर 'नर्तकी' कथा की कमरजहाँ से नायक का विवाह करके 'चंचा' में मुन्नी बाई की पुत्री का उसके प्रोफेसर से विवाह का मार्ग प्रशस्त करके आदर्श

उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। यही श्रेयस्कर मार्ग है जिससे समाज से कटे हुए, एक अलग ही उपेक्षित दुनियां में रहने वाले हिस्से को पुनः समाज में समायोजित कर उसके जीवन का पुररुद्धार किया जा सकता है। हुस्ना बाई को कविवर साक्षात निष्कलंक नारी चेतना कहते हैं, जिसने नर्तकी पद से उसका उद्धार किया– ''नर्तकी पदात् त्वां वारयितुं ममाऽयं प्रयत्नः। तत्सम्पाद्यऽहमपि नर्तकी तो ब्राह्मणी संजाता।''[8] सत्य है सामाजिक कल्याण ही ब्राह्मणत्व है।

'चंचा' में मुन्नी बाई की पुत्री से विवाह का आधार गुण एवं कर्म को बताते हुए प्रवीन कहता है ''नाहं नास्तिको न वा परम्पराविरोधी। परन्तु परम्पराया अन्धानुकरणमपि न मह्यं मनागपि रोचते। गुणकर्मार्जितवैशिष्ट्य एव मम दृढ़ो विश्वासो न पुनर्जातिमात्रायत्ते वृथाऽभिजात्याभिमाने।''[9] यही दृष्टिकोण वेश्यावृत्ति उन्मूलन का मार्ग है। अन्यथा सामाजिक अथवा प्रशासनिक औपचारिकताओं से तो कुछ होने वाला नहीं है– ''लोक नायकाः नेतारो मन्त्रिणोऽधिकारिणो न्यायाधीशाः महामण्डलेश्वराः सर्वेऽपि दृढ़समर्थका आसन् अस्यान्दोलनस्य! परन्तु वेश्यावृत्तिमपहाय साध्वीजीवनं यापयन्तीनामसां नर्तकीनां का नु भविता जीवनयापनत्यवस्थेत्यस्मिन् विषये न कोऽपि चिन्तयतिस्म। न कोऽपि सर्वगुणसम्पन्नां रुपलावण्यप्रतिमां नर्तकीपुत्रीं स्वस्नुषां स्वकलत्रं वा विधातुमिच्छतिस्मौ।''[10]

समसामयिक परिप्रेक्ष्य में मतलोलुपता के कारण बढ़ता जातीय संघर्ष अथवा साम्प्रदायिक वैमनस्य सामाजिक संरचनागत स्वरुप के लिए एक बड़ा खतरा बन गया है। सामाजिक सद्भाव घट रहा है। आरक्षणादि उपायों से वर्ग संघर्ष घटने के बजाय बढ़ रहा है और जिसे प्रयास करना चाहिए, उसे रोकने का वही इसे निजी स्वार्थों अथवा सत्ता लोलुपता के कारण बढ़ रहा है। इसे संकेतित करते हुए कविवर कहते हैं–''अर्थसाम्यप्रयासापेक्षया हृदयसाम्यस्थापनप्रयासः सुकरः उपादेयश्च प्रतिभाति। हन्त, तदेव कार्यं शासनेन, न च क्रियते।''[11]

कविवर सावचेत हैं इस तथ्य से कि प्रशासनिक प्रयासों की शिथिलता के बावजूद समय के साथ अपेक्षित प्रशंसनीय प्रयास हो रहे हैं, परिणाम दिखाई दे रहा है। जाति की अपेक्षा गुणों से पहचान मानवीय है और वह हो रहा है– ''पुरावत्तमिदं जातम्। सम्प्रति समुज्जृम्भते नूतनस्समाजो यत्र मानवः स्वगुणैरेव प्रतिष्ठितो, न पुनः स्वजात्या।''[12]

वैधव्य, बलात्कार, परित्यक्तावस्था न केवल प्राचीन समाज अपितु अर्वाचीन समाज में भी एक जीते जागते मनुष्य के जीवन का अन्त है। विधवा विवाह अथवा पुनर्विवाह के प्रति उदार दृष्टिकोण एवं सहृदयता ही इस सामाजिक विकृति का समुचित निराकरण है। जिस धर्म परम्परा एवं संस्कृति के नाम पर स्त्री पर पुनर्विवाह की वर्जना की परिकल्पनाएं थोपी जाती हैं, अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने उन्हीं शास्त्रीय एवं धार्मिक मान्यताओं के सशक्त प्रमाणों से विधवा विवाह अथवा पुनर्विवाह का मार्ग प्रशस्त कर कांटे से कांटा निकालने का साहसिक प्रयास किया है। बलात्कार से, परित्याग से, अपहरण से अथवा पति की मृत्यु के कारण कोई स्त्री त्याज्य नहीं है। वह वस्तुत पवित्र ही है, वरेण्य है। वे कहते हैं–

'न त्याज्या दूषिता नारी नास्यास्त्यागो विधीयते।
पुष्पमासमुपासीत ऋतुकालेन शुध्यति।''[13]

ब्रह्मर्षि वशिष्ठ के अनुसार वह पुनः विवाह के योग्य है–''सा चेदक्षतयोनिः स्यात्पुनः संस्कारमर्हति।''[14] और भी ''वैधव्यमात्रं न भवति विधवाया नियतिः। तन्नियतिस्तु तत्सौभाग्यम्।''[15] यही विचारधारा नारी सशक्तीकरण का महत्वपूर्ण सोपान सिद्ध होगा।

'दहेज' जो वस्तुतः अपने मूलस्वरुप में एक पिता के द्वारा अपनी पुत्री को आशीर्वाद, स्नेह एवं स्मृतिचिन्ह के रुप में दिया जाने वाला उपहार था, न जाने कब वरपक्ष के अधिकार के रुप में परिणत हो गया, कह नहीं सकते। समस्त वैधानिक प्रयासों एवं सामाजिक जागरुकता के बाद भी दहेज प्रथा सुरसा के मुँह की तरह बढ़ती ही जा रही है। उसका एकमात्र समाधान है युवा पीढ़ी विवेकशीलता के साथ कृतसंकल्प हो कि वे गुण, कर्म, रुचि, योग्यता, संस्कार, आचरणगत समानता के आधार पर अपने जीवन साथी का चयन करेंगे। चित्रपर्णी की लघुकथाएं 'जामाता' एवं 'गौर्यावरः' इसका दृष्टान्त है। जिसमें वर विनम्रतापूर्वक केवल कन्या का हाथ मांगते हैं और उन परिवारों की खुशियां लौट आती है।

भौतिकता की अंधी दौड़ में शामिल कलियुगी समाज में स्वार्थान्ध मनुष्य इस समय दोहरी जिंदगी को जी रहा है। इसका एक चेहरा वो है जो वह दिखाता है जैसा उसे होना चाहिए, जो आदर्श है और एक वो चेहरा है जो वह वस्तुत है– छल, कपट एवं वैमनस्यपूर्ण। इस सामाजिक दोहरे चरित्र को उद्घाटित किया है अभिराजराजेन्द्र मिश्र महोदय ने। अभिनयः, द्विसन्धानम्, पितृभक्तिः, काष्ठभाण्डम्, संस्कृतवर्षम्, पिशाचः, राष्ट्रपतिपुरस्कारः, आत्मविश्लेषणम्, मद्यनिषेधः, पात्रत्वम् जैसी चित्रपर्णी की लघुकथाएं समाज की इस विसंगति पर प्रहार करती हैं।

सनातन वैदिक परम्परा में प्रकृति की जिन अलौकिक शक्तियों को देवत्व के रुप में स्थापित किया है, वे समस्त जङजंगम की श्रृंखला को संतुलित रखने के लिए अनिवार्य है। इसी शुभाशंसा को व्यक्त करते हुए वैदिक ऋषियों ने उद्घोष किया था–

''ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरक्षिं शान्तिः पृथ्वी शान्तिरापः शान्तिरोषधय श्शान्तिर्वनस्पतय श्शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व शान्तिः। शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।''[16]

वह शान्ति अब अशान्ति में परिवर्तित हो रही है। पृथ्वी (मृदा), वायु, आकाश (ध्वनि), सूर्य (पराबैंगनी किरणें), जल सब कुछ अशान्त, असंतुलित एवं विकारग्रस्त हैं। प्रकृति का संतुलन बिगड़ रहा है, जैव विविधता गड़बड़ा रही है, वन्य प्रजातियाँ नष्ट हो रही है, प्रकृति का पोषण व दोहन होने की बजाय मात्र शोषण हो रहा है।

अभिराजराजेन्द्र मिश्र इससे अपरिचित नहीं है। इस सामयिक विकराल स्थिति के प्रति वे संवेदनशील है। यद्यपि उनकी अधिकांश कथाएं मानवीय संवेदनाओं से जुड़ी है परन्तु चित्रपर्णी की कईं लघुथाओं में तथा 'कुक्की' कथा में उनकी प्रकृति एवं पशुपक्षियों के प्रति

संवेदनशीलता प्रकट होती है। उनकी छागबलिः, वृद्धामहिषी, नयनयोर्भाषा, कुक्की, इदंप्रथमतया, प्राणभयम्, कृतज्ञ, वैराग्यम् एवं अश्रुमूल्यम् आदि कथाएं पर्यावरण चेतना की साक्षात् प्रमाण है। 'अश्रुमूल्यम्' लघुकथा में इस पांचभौतिक सष्टि की सार्थकता प्रतिपादित करते हुए वे कहते हैं–''प्रकृतिक्रोडे, विलसतां पशुपक्षिस्थावराणां समेषां सार्थकता भवत्येव। नास्यां सृष्टौ पांचभौतिक्यां किमप्युपादानं निरर्थकम्। यथा मानवो जन्मजन्मान्तराचरितकर्मविपाकवशादिह संजातस्तथैव पशुपक्षिवृक्षा अपि। अतएव सर्वेऽपि मानवसाधारणा एव मन्तव्याः।''[17]

भ्रष्टाचार अधुनातन समाज की एक अन्यतम समस्या है जिसने सम्पूर्ण प्रशासनिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक व्यवस्था को आमूलचूल जर्जर कर दिया है। नैतिक सिद्धान्तों का स्थान भ्रष्टाचार ने ले लिया है। जीवन मूल्य क्षीण हो रह हैं, धन की महत्ता बढ़ रही है, लोभ बढ़ रहा है, चहुँ ओर अर्थ की सत्ता है। परिवेशगत प्रभाव के कारण मुनष्य कम परिश्रम में अधिक धनोपार्जन करना चाहता है। भ्रष्टाचार (आर्थिक) इसका लघु एवं सरल मार्ग है। चित्रपर्णी की लघुकथाएं नियुक्तिः मद्यनिषेधः, उर्ध्वरेता, आत्मविश्लेषणम्, अवमानना, रक्षाकवचम् भिक्षुकः, नियतिकौशलम् आदि भ्रष्टाचार पर तीक्ष्ण प्रहार करते हुए जनमानस को आन्दोलित करती है तथा नैतिकता का मार्ग प्रशस्त करती है। आत्मविश्लेषणात्मक स्वरुप में कलियुग के प्रचारतन्त्र पर प्रहार करते हुए वे कहते हैं–''कलियुगेऽस्मिन् प्रचारतन्त्रमव जीवितसर्वास्वम्।'' और भी वे कहते हैं–''ये परमार्थतः स्वाभिमानैकजीविताः स्वोपार्जितवित्ततुष्टा, चारित्र्यकल्पतरुभूताः शतसहस्रगुणालङ्कृताश्च ते पंके गाव इव भृशं सीदन्ति।''[18]

अपनी पहुंच के बल से अयोग्य व्यक्ति जब नियुक्ति पा लेता है तब पद के आवरण में उसकी सारी अयोग्यता छिप जाती है। परन्तु संस्कार अपरिवर्तित रहते हैं। साक्षात्कार प्रक्रिया एवं नियुक्ति प्रक्रिया पर प्रश्नचिन्ह खड़ा करने वाली 'काष्ठभाण्डम्' लघुकथा इस विषय कविवर ने दृष्टिकोण एव वरेण्य विचार दर्शनीय है– ''सामाजिक दृष्ट्या या काऽपि पदोन्नतिर्जायेत मानवस्य, तया पदोन्नत्या कामं तस्य पदमुन्नतं भवेत् परन्तु सांस्कारिकाः गुणा दुर्गुणाश्च अपरिवर्तितास्तिष्ठन्ति। एव हि मन्दबुद्धौ प्रवक्तदि पदोन्नते कृते मन्दबुद्धैरेव पदेन सहोन्नतिर्जायते। प्रतिभाशीले पदोन्नते सति प्रतिभाया उन्नतिर्भवति।''[19]

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि एक जिम्मेदार साहित्यकार के धर्म का पालन अभिराजराजेन्द्र मिश्र ने पूर्ण मनोयोग से किया है। उनकी कथाएं समाज को प्रतिबिम्बित करते हुए समाधान का आदर्श मार्ग प्रस्तुत करती है, वे जनमानस को दोलायमान करती है, हृदयवीणा को स्वरायमान करती है, विचारों को गतिमान करती है तथा सन्मार्ग में प्रेरित करती है। समसामयिक समाज की लगभग सभी समस्याओं को रुचिकर कथाओं के माध्यम से कविवर ने उद्घाटित किया है। यद्यपि समकालीन समाज की एक ज्वलन्त समस्या युवापीढ़ी की हिंसक प्रवृत्ति– आतंकवाद, उग्रवाद, नक्सलवाद आदि को कविवर की कथाओं में स्थान नहीं मिला है। चूकि मिश्र जी की लेखनी सतत प्रवाहशील है, अतः आशा करते हैं इन विषयों को, समाज पर व परिवार पर इसके दुष्परिणामों को रेखांकित करने वाली हिंसा से विरक्ति का मार्ग प्रेरित करने वाली कथाएं सहृदय पाठक वर्ग को मिलेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अभिराजराजेन्द्र मिश्र, इक्षगन्धा कथा संग्रह/जिजीविषा पृ.सं. 12
2. कालिदास, अभिज्ञानशाकुन्तलम्, अंक–2
3. अभिराजराजेन्द्र मिश्र–पुनर्नवा कथा संग्रह/पुनर्नवा पृ. सं. 130
4. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – इक्षुगन्धा कथा संग्रह/शतपर्विका पृ.सं. 40
5. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – इक्षुगन्धा कथा संग्रह/शतपर्विका पृ.सं. 40
6. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – रांगड़ा कथा संग्रह/चंचा पृ. सं. 26
7. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – रांगड़ा कथा संग्रह/चंचा पृ. सं. 26
8. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – पुनर्नवा कथा संग्रह/नर्तकी पृ.सं. 75
9. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – रांगड़ा कथा संग्रह/चंचा पृ. सं. 31
10. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – पुनर्नवा कथा संग्रह/नर्तकी पृ.सं. 45
11. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – पुनर्नवा कथा संग्रह/संकल्प पृ.सं. 47
12. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – पुनर्नवा कथा संग्रह/संकल्प पृ.सं. 51
13. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – पुनर्नवा कथा संग्रह/पुनर्नवा पृ.सं. 130
14. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – पुनर्नवा कथा संग्रह/पुनर्नवा पृ.सं. 131
15. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – पुनर्नवा कथा संग्रह/पुनर्नवा पृ.सं. 131
16. वैदिक शान्तिपाठ
17. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – चित्रपर्णी कथा संग्रह/अश्रुमूल्यम् पं.सं. 117
18. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – चित्रपर्णी कथा संग्रह/आत्मविश्लेषणम् पं.सं.66
19. अभिराजराजेन्द्र मिश्र – चित्रपर्णी कथा संग्रह/काष्ठभाण्डम् पं.सं. 108